©2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 8 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

हठयोग : एक समीक्षा

रामानन्द (शोधच्छात्र)
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा–विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

योग–साधना के क्षेत्र में हठयोग–साधना नाथ पंथ की एक अनुपम और मौलिक देन है। आदिनाथ भगवान् शिव ने तत्त्व–जिज्ञासु भगवती पार्वती के प्रश्नों का उत्तर देते हुए सर्वप्रथम योग–विषयक जो गुप्त–ज्ञान प्रकाशित किया था उसे दैवयोग से मछली के पेट में स्थित महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ जी ने ग्रहण कर अपने शिष्य महायोगी गोरक्षनाथ को प्रदान किया। हठयोग की साधना मुख्यतः प्राण–साधना है।[1] सिद्ध–सिद्धान्त–पद्धति में महायोगी गुरु गोरक्षनाथ जी ने स्वयं कहा है–

हकारः कीर्तितः सूर्यष्ठकारश्चन्द्र उच्चते।
सूर्याचन्द्रमसोर्योगाद् हठयोगो निगद्यते।।[2]

अर्थात् सूर्य (प्राण) को 'ह' कहा जाता है और चन्द्र (अपान) को 'ठ' कहते हैं। इन्हीं 'ह' और 'ठ' (प्राण तथा अपान) के योग को हठयोग कहा जाता है।

हठयोग के प्रमुख ग्रन्थों या शास्त्रों में शिवसंहिता, हठयोग-प्रदीपिका, घेरण्डसंहिता, गोरक्षसंहिता, गोरक्षशतकम्, हठरत्नावली तथा सिद्धसिद्धान्त पद्धति आदि को माना जाता है। महर्षि घेरण्ड की योग शिक्षा पर भाष्य स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती ने लिखा है।

पाँच पटलों और छः सौ एकतालिस पद्यों से युक्त शिवसंहिता का ग्रंथन शिव द्वारा पार्वती को उपदेश के रूप में प्राप्त हुआ है। क्योंकि सम्पूर्ण ग्रन्थ में केवल एक बार अन्तिम पटल में पार्वती प्रश्नकर्ता के रूप में दृष्टि गोचर होती हैं जबकि शिव चतुर्थ पटल में और पञ्चम पटल में चार–चार बार विविध पदों से पार्वती को सम्बोधन करते हुए निबद्ध है। अतः इस ग्रन्थ को शिव पार्वती संवाद न मानकर पार्वती के माध्यम से लोक कल्याण के लिए शिव योगविद्या का उपदेश करने में प्रवृत्त हैं, इस रूप में इसका निबन्धन हुआ है।

आचार्य स्वात्माराम योगीन्द्र विरचित हठयोगप्रदीपिका में समस्त हठयोग विषयक तत्त्व का सार है। यह ग्रन्थ चार उपदेशों में विभक्त है जिसमें कुल श्लोकों की संख्या 383 है।[3]

घेरण्डसंहिता में षट्कर्म के द्वारा अन्तः एवं बाह्य शौच के लिए विधिवत् मार्गदर्शन किया गया है। यह हठयोग के अन्य अङ्गों के आधार रूप में वर्णित ग्रन्थ है। आधार के दृढ़ एवं मजबूत होने पर ही अग्रिम साधनों की सिद्धि सम्भव है। अतः षट्कर्म को अन्य समस्त अग्रिम अङ्गों की आधार शिला के रूप में जानने के लिए घेरण्डसंहिता में वर्णित सात उपदेशों (अध्यायों) का विस्तार से वर्णन किया गया है।[4]

गोरक्षसंहिता हठयोग साधना की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। गोरक्षसंहिता का यह संस्करण दो शतकों में विभाजित है। प्रथम शतक में षडंगयोग के अङ्गों में आसन, प्राणसंरोध, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि की गणना की गई है। द्वितीय शतक के प्रारम्भ में पूरक, रेचक और कुम्भक नामक प्राणायाम के तीन प्रकारों का वर्णन कर उनकी मात्रा एवं अवधि का परिचय देकर स्थान, क्रिया आदि का उल्लेख करते हुए कुंभक आदि के भेदों का वर्णन किया गया है।

गोरक्षशतकम् एवं गोरक्षपद्धति में भी हठयोग का विवेचन किया गया है।

हठयोग के आचार्यो में योगीन्द्र मत्स्येन्द्रनाथ, गुरूगोरखनाथ, योगीस्वात्माराम, श्री आदिनाथ, शाबर, आनन्दभैरव, चौरंगी, मीन, विरूपाक्ष, बिलेशय, मन्थान, भैरवयोगी, सिद्धि, बुद्ध, कन्थड़ि, कोरष्टक, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटीनाथ, कानेरी, पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरंजन, कपाली, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वर, अल्लाम, प्रभुदेव, घोड़ा चोली, टिण्टिणि, भानुकी, नारदेव, खण्डकापालिक आदि हठयोग के सिद्ध आचार्य माने जाते हैं।[5] हठयोग विद्या गुरु–शिष्य परम्परा पर आधारित विद्या है।

स्वात्मारामयोगीन्द्रविरचितहठयोगप्रदीपिका में कहा गया है कि राजयोग की सिद्धि के लिए हठविद्या का उपदेश किया गया है–**'केवलं राजयोगाय हठविद्योपदिश्यते'।**[6] पातंजलयोग दर्शन में चित्तवृत्तिनिरोध रूप असम्प्रज्ञात समाधि के सिद्ध हो जाने पर कैवल्य प्राप्ति का निर्देश है। हठयोग भी उसी परम्परा का निर्वहन करता है। हठयोगप्रदीपिका में हठयोग को राजयोग सिद्धि के लिए सीढ़ी के रूप में प्रतिपादन किया गया।[7] जबकि शिव संहिता में हठयोग एवं राजयोग को एक दूसरे का पूरक मानते हुए कहा गया है कि हठयोग के बिना राजयोग और राजयोग के बिना हठयोग की सिद्धि नहीं हो सकती– **'हठं बिना राजयोगो राजयोगं बिना हठः'।**[8] योगशिखोपनिषद् में योग के मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग ये चार स्तर स्वीकार किये गये हैं जो साधना के उत्तरोत्तर चार सोपान हैं।

हठयोग का अर्थ सामान्यतया हठपूर्वक किये जाने वाला योग जन समुदाय में प्रचलित है जो वास्तविकता से भिन्न है। हठयोग का अर्थ है देह स्थित सूर्य (ह) और चन्द्र (ठ) के ऐक्य साधना को हठ कहते हैं। तात्पर्य यह है कि प्राणसंयम के द्वारा सूर्य स्वरूप पिंगला नाड़ी में प्रवहित दक्षिण स्वर तथा चन्द्र स्वरूप इड़ा नाड़ी में प्रवहित वाम स्वर की एकता हठ कहलाती है। सूर्य स्वर और चन्द्रस्वर की साम्यावस्था में जिस साधना के द्वारा सुषुम्ना में प्राण संचार होता है उस साधना को हठयोग कहते हैं।

इस साधना में देह के सभी दोष तथा जड़ता दूर हो जाती है। देह शुद्धि उसका लक्ष्य है। शरीर की शुद्धि के लिए महर्षि घेरण्ड ने शोधन, दृढ़ता, स्थैर्य, धैर्य, लाघव, प्रत्यक्ष और निर्लिप्तता। इन सात साधनों का विधान किया है– **'शोधनं दृढ़ता चैव स्थैर्य धैर्य च लाघवम्। प्रत्यक्षं च निर्लिप्तं च घटस्य सप्तसाधनम्।।**[9]

'शोधन' का अर्थ है शुद्धिकरण। शरीर और मन को विकार रहित बनाने के लिए शुद्धिकरण अत्यन्त आवश्यक है। दृढ़ता का सम्बन्ध शारीरिक एवं मानसिक दोनों से है। महर्षि घेरण्ड का कथन है कि आत्मशुद्धि के लिए व्यक्ति को दृढ़ता का गुण प्राप्त करना आवश्यक है। **'स्थैर्य'** का तात्पर्य स्थिरता। यहाँ स्थिरता को एक गुण या आवश्यकता के रूप में देखा गया है। **'धैर्य'** भी एक गुण है जो योग के लिए परम आवश्यक है। **'लाघवम्'** का तात्पर्य है हल्कापन जो यह प्रतिपादित करता है कि योगी का शरीर हल्का रहना चाहिए। भारी भरकम शरीर योग के लिए उपयुक्त नहीं है। **'प्रत्यक्ष'** का अर्थ होता है ग्रहणशीलता अर्थात् ग्रहण करने का स्वभाव। यह वह अवस्था है जिसमें आप एक आन्तरिक अनुभव को देखते, अनुभव करते और उसी में अपने आपको स्थित करते हैं। **'निर्लिप्त'** का तात्पर्य है मन की अनासक्त अवस्था। जीवन, शरीर, विचार, भावना, वासना और विकार आदि से परे अपने आत्मज्ञान में ही अपने आपको स्थिर कर लेना निर्लिप्त अवस्था है। महर्षि घेरण्ड के अनुसार एक साधक के लिए उक्त ये सात गुण आवश्यक माने गये हैं इन सातों गुणों के सात प्रकार के योगाभ्यास विहित है–षट्कर्म, आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि। षट्कर्मों से शरीर शुद्धि, आसनों से दृढ़ता, मुद्राओं से स्थिरता तथा प्रत्याहार से धैर्य की प्राप्ति होती है। प्राणायाम से शारीरिक स्फूर्ति या हल्कापन, ध्यान से आत्मसाक्षात्कार और समाधि से निर्लिप्तता तथा मुक्ति प्राप्त होती है।[10]

षट्कर्मों से शरीर की शुद्धि होती है। षट्कर्म में छः प्रकार की क्रियाएं होती हैं– धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक तथा कपालभाति। मुख के द्वारा स्वच्छ वस्त्र को निगलकर पेट को स्वच्छ करने के कार्य को **धौति** कहते हैं। गुदावेणुखण्ड के द्वारा जल प्रवेश कराकर वृहद् आतों को शुद्ध करने के कार्य को **वस्ति** कहते हैं। नासिका से जल को खींचकर तथा मुख से निकालकर नासिका के उभयरन्ध्रों के शोधन कार्य को **नेति** कहते हैं। खड़े होकर घुटनों पर हथेलियों को रखकर पेट को दाहिने बायें घुमाना **नौलि** क्रिया है। सूक्ष्म लक्ष्य को एकाग्रदृष्टि से सतत् देखने के कार्य को **त्राटक** कहते हैं। शीघ्रतापूर्वक श्वास–प्रश्वास के पूरक रेचक करने की क्रिया को **कपालभाति** कहते हैं। आसनों से शारीरिक शक्ति या दृढ़ता प्राप्त होती है। (आसनेन भवद्दृढ़म्) यहां पर दृढ़ता का सम्बन्ध शारीरिक क्षमता आन्तरिक बल के साथ–साथ उत्तम स्वास्थ्य से है। आसनों के द्वारा शरीर स्वस्थ हल्का और स्फूर्ति वाला होकर साधक के अनुकूल हो जाता है। हठयोगप्रदीपिका में चौरासी आसनों की चर्चा है उनमें सिद्धासन, पद्मासन, सिंहासन, भद्रासन ये चार महत्वपूर्ण हैं। घेरण्ड संहिता में 32 आसनों का उल्लेख है, जिनमें 15 आसन हठयोगप्रदीपिका के हैं।

हठयोगप्रदीपिका में सिद्धासन को श्रेष्ठ कहा गया है– **'किमन्यैर्बहुभिः पीठैः सिद्धे सिद्धासने सति'।**[11] हठयोग के आसनों का लक्ष्य ध्यान–आसन है जो पातंजल योग में वर्णित **'स्थिरसुखमासनम्'** के समान है। हठयोग के सभी आसन शरीर को ध्यान–आसन में बैठने योग्य बनाते हैं।

जिन क्रियाओं से प्रत्याहार, प्राणायाम तथा ध्यान की सिद्धि में हमें सहायता प्राप्त होती है उन कुशल क्रियाओं का नाम मुद्रा है। हठयोगप्रदीपिका में दस प्रकार की मुद्राओं का वर्णन किया गया है–महामुद्रा, महाबन्ध, महाबेध, खेचरी, उड्डियान, मूलबन्ध, जालन्धरबन्ध, विपरीतकरणी, वज्रोणि एवं शक्तिचालनी। ये मुद्राएं आदिनाथ द्वारा वर्णित है जो जरा–मृत्यु को दूर करती हैं तथा अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईषित्व तथा वषित्व इन अष्टसिद्धियों को प्रदान करने वाली हैं। घेरण्ड संहिता में 25 मुद्राओं का वर्णन किया गया है। प्राण और मन की चंचलता मुद्राओं के अभ्यास से समाप्त हो जाती है और मन भी शीघ्रता से केन्द्रित होकर अन्तर्मुखी हो जाता है।

मन को इन्द्रियों से अलग कर अन्तर्मुखी बनाना **प्रत्याहार** है। प्रत्याहार के अभ्यास से इन्द्रियाँ वशीभूत हो जाती हैं तब मन स्वतः नियन्त्रण में आ जाता है और वह दुःख के कारण समूल नाश करता है तत्पश्चात् मन को उच्च साधना में लगाया जा सकता है। हठयोग की साधना में **'प्राणायाम'** का अत्यन्त महत्व है। हठयोग में भी प्राणायाम के पूरक, कुम्भक तथा रेचक ये तीनों रूप हैं जैसा कि पातंजलयोग में वर्णित है। प्राणायाम के अभ्यास से सभी नाड़ियाँ शुद्ध हो जाती हैं। हठयोप्रदीपिका में सिद्धासन एवं पद्मासन प्राणायाम के उपयुक्त आसन है। हठयोप्रदीपिका में कुम्भक के सूर्यभेदन, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्च्छा, प्लाविनी ये आठ भेद माने गये हैं। प्राणायाम का अभ्यास शरीर को निरोग बनाकर मन को स्थिरता प्रदान करता है और शरीर को हल्का बनाता है।

अपने चित्त आत्मतत्त्व का चिन्तन हठयोग की साधना में **'ध्यान'** कहा जाता है। आत्मध्यान से अमरत्व की प्राप्ति होती है। चक्रभेदन करते हुए ध्यान द्वारा कुण्डलिनी को जागृत करने से जीवात्मा परम शिव का साक्षात्कार कर लेता है।

'समाधि' में आत्मा के यथार्थ स्वरूप का अनुभव होता है। हठयोग में केवल कुम्भक प्राणायाम से प्राण को सुषुम्ना में प्रविष्ट कराकर प्राणगति को पूर्णतया अवरूद्ध किया जाता है। इससे चित्त पूर्ण रूप से अवलम्ब विहीन तथा निर्विषयक हो जाता है। इसे जड़समाधि भी कहते हैं।

हठयोग में **'नादश्रवण'** का भी बड़ा महत्त्व है। अनाहत ध्वनिरूपी नाद के श्रवण से सहज समाधि लग जाती है ऐसा हठयोगियों का मत है। हठयोग में **'कुण्डलिनी जागरण'** का विशेष महत्त्व है। नाभिचक्र के मध्य कुण्डलिनी है। इसका उत्थान मूलबन्ध, उड्डियानबन्ध और जालन्धरबन्ध के अभ्यास से किया जाता है। मूलाधार में ब्रह्मचक्र है इसमें अग्नि के समान दीप्त शक्ति का ध्यान करने से कुण्डलिनी जाग

जाती है। जब ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचकर यह कुण्डलिनी शिव से मिल जाती है तब चन्द्रमा के द्वार पर यही सूर्य का स्थित होना है। जिसे जीवात्मा का शिवपद में अभिन्न होना कहलाता है जो हठयोग का परम प्रतिपाद्य है।

इस तरह हम देखते हैं कि हठयोग राजयोग की पूरक या सहायक पद्धति है। हठयोग में शारीरिक उन्नति शरी की पुष्टि, अंग प्रत्यंगों में दृढ़ता, नाड़ी संस्थान पर अधिकार आदि पर विशेष बल दिया जाता है। इसके लिए आसनों, बन्धों, मुद्राओं और प्राणायामों की सहायता ली जाती है। इस योग में आसन, प्राणायाम और षट्कर्म को बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है। इससे नाड़ियों का मल शोधन होता है, शुद्ध नाड़ी में पूरित प्राणवायु के द्वारा मन स्थिर होता है। हठयोग राजयोग की सिद्धि के लिए सीढ़ी के तुल्य है। वहीं यह भी स्पष्ट किया गया है कि योग साधना की सफलता के लिए हठयोग और राजयोग दोनों अनिवार्य है। हठयोग से शरीर और मन पर नियन्त्रण होता है और राजयोग से आध्यात्मिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं– **हठं विना राजयोगो राजयोगं बिना हठः। न सिध्यति ततो युग्ममानिष्पत्तेः समभ्यसेत्।।**[12]

महायोगी गोरखनाथ ने पातंजलयोग दर्शन में प्रतिपादित अष्टाङ्गयोग एवं हठयोग में प्रतिपादित षडंगयोग में भेद न कर उनमें समन्वय स्थापित करने पर बल दिया है। अष्टाङ्गयोग में वर्णित यम और नियम साधना के सहज अङ्ग हैं इसे स्वीकार कर हठयोग षडंगयोग का विधान किया गया है। वहाँ षट्चक्रभेदन, कुण्डली जागरण, नादानुसन्धान, मुद्राबन्ध की साधना को प्रमुखता से हठयोग साधना में शामिल किया गया है। हठयोगप्रदीपिका में कहा गया है कि जब तक मन का पूर्ण निरोध नहीं हो पाता और प्राण की गति पर नियन्त्रण नहीं हो जाता तब तक तत्त्वज्ञान नहीं होता। तत्त्वज्ञान और मोक्ष के लिए आवश्यक है कि प्राण और मन पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त हो यह तथ्य पातंजलयोग दर्शन में वर्णित राजयोग में भी प्राप्त होता है। हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है कि जब जीवात्मा और परमात्मा दोनों में एकरूपता और समता हो जाती है तथा सारे संकल्प या विचार नष्ट हो जाते हैं उसे स्थिति को समाधि कहते हैं– **'तत्समं च द्वयोरैक्यं जीवात्मापरमात्मनोः। प्रनष्टसर्वसंकल्पः समाधिः सोऽभिधीयते'।।**[13] निर्षकतः कहा जा सकता है कि हठयोग में परमपुरुषार्थ कैवल्य के लिए प्राण साधनाओं का निर्देश दिया गया है। साधना के लिए साधक को समर्थ बनाने में हठयोग विशिष्ट आसनों, बन्धों, मुद्राओं, षट्कर्म, प्रत्याहार, प्राणायाम आदि की अनुशंसा करता है। धारणा, ध्यान और समाधि इन अन्तरंग साधनों की व्यवस्था कतिपय असमानताओं के साथ दोनों में स्वीकार की गयी है। समाधि के सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात इन दोनों रूपों को दोनों में अपनी मान्यताओं के अनुसार स्वीकार किया गया है। वाह्यदृष्टि से हठयोग की साधनायें वृहद् परिलक्षित होती हैं जबकि पातंजलयोग में वर्णित साधनायें सन्तुलित एवं व्यवस्थित हैं।

वर्तमान में मानव शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता के लिए उद्विग्न है अध्यात्मक की ओर प्रवृत्त व्यक्ति की किंकर्त्तव्यविमूढ़ है ऐसी अवस्था में हठयोग का अनुशीलन विशेष प्रासंगिक है। हठयोग से शरीर और मन पर नियन्त्रण प्राप्त होता है, जिससे उच्चकोटि की मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं और साधक कैवल्य को प्राप्त करता है।

सन्दर्भ–सूची

1. ''हश्च ठश्च हठौ–सूर्यचन्द्रौ तपोयोगः हठयोगः। एतेन हठशब्द वाच्ययोः प्राणापानयोरैक्यलक्षणः प्राणायामो हठयोगः।'' हठयोग प्रदीपिका में ब्रह्मानन्द की व्याख्या, पृष्ठ 18
2. सिद्धसिद्धान्तपद्धति 1/69, पृष्ठ 27
3. हठयोगप्रदीपिका सम्पादक रामलाल श्रीवास्तव (भूमिका)
4. घेरण्ड संहिता पर भाष्य– स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती (भूमिका)
5. हठयोगप्रदीपिका 1/5–9, पृष्ठ 2
6. वही 1/2
7. वही 1/1
8. शिवसंहिता 5/2/7
9. घेरण्डसंहिता, महर्षि घेरण्ड की योग शिक्षा पर भाष्य–स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती (भूमिका), पृष्ठ 15
10. घेरण्डसंहिता, महर्षि घेरण्ड की योग शिक्षा पर भाष्य–स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती (भूमिका) 10/11, पृष्ठ 18
11. हठयोग प्रदीपिका 1/42
12. वही 2/76
13. वही 4/7